INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES
(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)
DOI : 03.2021-11278686 ISSN : 2582-8568 IMPACT FACTOR : 6.865 (SJIF 2023)

हिन्दी का पुनर्जागरण काल — भारतेन्दु युग
(Renaissance period of Hindi - Bharatendu Era)

प्रा. डॉ. शर्मिला एस. पटेल
हिंदी विभागाध्यक्ष एवं कार्यकारी आचार्य,
श्री रंग नवचेतन महिला आर्टस् कालेज, वालीया

DOI No. 03.2021-11278686 **DOI Link ::** https://doi-ds.org/doilink/12.2023-17479349/IRJHIS2312006

प्रस्तावना :

हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग का प्रारंभ सन. १८५७ से माना जाता है। हिन्दी साहित्य में उसे भारतेन्दु युग के नाम से पहचाना जाता है। भारतेन्दु युग अथवा पुनर्जागरण काल का उदय हिन्दी कविता के लिए नवीव जागरण के संदेशवाहक युग के रुप में हुआ था। इस युग में जन चेतना पुनर्जागरण की भावना से अनुप्राणित थी, फलस्वरुप सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्र में न केवल अतिरिक्त सक्रियता थी अपितु इन सब में गहन अन्त: सम्बन्ध विद्यमान था। भारतेन्दु युगीन कवि—कतृत्व पर इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। इसकी परिणति विषय—चयन में व्यापकता और विविधता के रुप में हुई। श्रृंगारिक रसिकता, अलंकरण—मोह, रीति—निरुपण, प्रकृति का उदीपनात्मक चित्रण प्रवृति, रीतिकालीन प्रवृतियों का महत्व क्रमश: कम होता गया और भक्ति ओर नीति को प्रमुख वर्ण्य विषयों के रुप में ग्रहण करने का आग्रह भी नहीं रह गया। भारतेन्दु हरिशचंद्र ने जनता को उदबोधन प्रदान करने के उद्देश्य से जातीय संगीत अर्थात लोकगीत की शैली पर सामाजिक कविताओं की रचना पर बल दिया। मातृभूमि—प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार, गोरक्षा, बाल विवाह निषेध, शिक्षा प्रसार का महत्व, मद्य निषेध, भ्रूण—हत्या की निन्दा आदि विषयों को कविगण अधिकाधिक अपनाने लगे थे। राष्ट्रीय भावना का उदय भी इस काल की अनन्य विशेषता है। ब्रह्मोसमाज, प्रार्थना समाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण परमहंस और विवेकानंद के विचारों तथा

थियोसोफिकल सोसायटी के सिद्धांतो का प्रभाव भी जनजीवन पर पड़ रहा था। आर्थिक, औद्योगिक और धार्मिक क्षेत्र में पुनर्जागरण की प्रक्रिया प्रारंभ होने लगी थी। पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली ने शैक्षिक क्षेत्र में भी वैयक्तिक स्वतंत्रता की प्रेरणा प्रदान की। अंग्रेजी का प्रचार प्रसार यद्यपि जनता के सम्पर्क साधन और प्रशासकीय आवश्यकताओं के लिए किया जा रहा था, पर अंग्रेजी साहित्य के अध्ययन ने अन्य देशों के साथ तुलना का अवसर भी प्रदान किया और इस तरह राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए उचित वातावरण बना था। मुद्रण यंत्रो के विस्तार और समाचारपत्रों के प्रकाशन ने भी जन—जागरण में योग दिया। परिणाम स्वरुप तत्कालीन साहित्य चेतना मध्यकालीन रचना प्रवृतियों तक ही सीमित न रहकर नवीन दिशाओं की ओर उन्मुख होने लगी।

भारतेन्दु युगीन कवियों का काव्य फलक अत्यंत विस्तृत है। उनकी रचना प्रवृतियों एक ओर भक्तिकाल और रीतिकाल से अनुबद्ध है, तो दूसरी ओर समकालीन परिवेश के प्रति जागरुकता का भी उनमें अभाव नहीं है।

भारतीय वीरों में प्रताप, छत्रसाल, शिवाजी आदि ने क्षेत्र विशेष की रक्षा के लिए तत्परता और वीरता का परिचय दिया था, उसका स्तवन करनेवाले भूषण प्रभृति कवि क्षेत्रीय भावना अर्थात् संकीर्ण राष्ट्रीयता से उपर नहीं उठ सके थे। भारतेन्दु युगीन कवियों ने भारतीय इतिहास के गौरवशाली पृष्ठों की स्मृति तो अनेक बार दिलायी पर उसकी राष्ट्रीय भावना यही तक सीमित नहीं रही। अंग्रेजो की विचारधारा और उनकी देशभक्तिपूर्ण कविताओं से भी उन्होंने यथेष्ट प्ररणा ली, जिसका फल यह हुआ की क्षेत्रीयता से ऊपर उठकर वे संपूर्ण राष्ट्र की नब्ज को टटोलने लगे।

भारतेन्दुयुग की पृष्ठ भूमि एक नई चेतना से व्याप्त थी। राष्ट्रीयता का भाव उद्दीप्त करने के लिए विविध संस्थायें स्थापित हो रही थी। कांग्रेस का जन्म उसी काल में हुआ था। भारतेन्दु युग में राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति हमें दो रुपो में मिलती है। एक रुप प्राचीन परिपाटी की श्रृंगार रस भीनी कविताओं में है, जो अधिकांश व्रजभाषा में है, दूसरा रुप नई उमंगो को लेकर नये भाव और नये भाव से खड़ी—बोली में प्रकट हुआ। इसी दूसरे नये रुप का प्रधान विषय था राष्ट्रीयता का पोषण।

राष्ट्रीयता में कई भाव सन्निहित है। ‘‘देश—प्रेम’’ इसका मूलाधार है। भारतेन्दुयुग के आरंभ में ही हमें देश की दुर्दशा पर क्रन्दन मिलता है। स्वयं भारतेन्दु ने इसके लिए आमंत्रित किया है।

भारत दुर्दशा :—

‘‘रोवहु सब मिलिकै आबहु भारत भाई।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।
सबसे पहिले जेहि ईश्वर धन—बल दीनों।
सबसे पहिले जेहि सभ्य विधाता कीनो।।
सबसे पहिले जो रुप रंग रस भीनो।
सबसे पहिले विद्याफल जिन गहि लीनो।।
अब सबके पीछे सोई परत लखाई।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।
जहाँ भए शाक्य हरिचन्दरु नहुप ययाती।
जहॉ राम युधिष्ठिर वासुदेव सर्याती।।
जहॉ भीम अर्जुन करन की छटा दिखाती।
तहॅ रही मूढता कलह अविणा राती।।
अब जहॅ देखहु तहॅ दु:खहि दु:ख दिखाई।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।
लरि बैदिक जैन डुबाई पुस्तक सारी।
करि कलह बुलाई जवन सैन पुनि भारी।।
तिन नासी बुधि बल विद्या धन बहु बारी।
छाई अब आलस कुमति कलह अंधियारी।।
भए अंध पंगु सब दीन हीन बिलखाई।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।
अंगरेज—राज सुख साज सजे सग भारी।
पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।।
ताह पै महॅगी काल रोग विस्तारी।
दिने दिने दूने दु:ख ईस देत हा हा री।।
सबके ऊपर टिक्कस की आफत आई।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।’’ २

‘‘भारत दुर्दशा’’ दुखान्त रुपक १८७५

''फरकि उठी सबकी भुजा, खरकि उठी तलवार।
क्यों आपुहि ऊंचे भए, आर्य मोछ के बार
काशी प्राग अयोध्या नगरी, दीन ख्त्य सम ठाढी सगरी
यंडालहु जेहि नि रखि धिनाई, रही सबै भुव महं मसि लाई।
हाय पंचनद ! हा पानी पत ! अजहुँ रहे तुम धरनि विरराजत
तुममें जल नहिं जमुना गंगा, बढंहु वेग करि तरल तरंगा।
धोवहु यह कलक की रासी, बोरहु किन झट मथुरा कासी।
कुस कन्नौज अंग अरु बंगहि, बोरहु किन निज कठिन तरंगहि।
ओ भयानक भ्राता सागर, तुम तरंग निधि अति बाल आगर
बढहु न बेगि धाइ क्यों भाई, देहु भरत भुव तुरत डुबाई।
धेरि छिपावहु विंध्य हिमालय, करहु सकल जल भीतर तुम लय।
धोवहू भारत अपजस पंका, मेटहु भारत भूमि कालंक।''३

अंग्रेजो की शोषण—नीति का भारतेन्दु द्वारा प्रत्यक्ष उल्लेख अतीत के प्रेरणादायी प्रसंगो द्वारा नवयुवको को पुनर्जागरण का मंत्र दिया है।

गांधी युग से बहुत पहले ही भारतेन्दु ने गाँव और किसानों की ओर देखा था, और अंग्रेज शासकों की कुटनीति का उन्हें अच्छी तरह पता था।

कवि भारतेन्दु ने अपनी कविताओं के माध्यम से देश में नई जागृति लाई। भारतेन्दुजी ने नवजागरण का जयगान किया। शताब्दियों तक पराजित जाति के हृदय में स्वाभिमान की चेतना और जीवन की स्फूर्ति भरनेवाले तथा काव्य क्षेत्र में देशानुराग मातृ —भाषा भक्ति और राष्ट्रीय प्रेम की नई भावनाओं को ओज एवं गति देनेवाले पहले कवि सच्चे अर्थ में राष्ट्रकवि भारतेन्दु ही है।

भारतेन्दुजी ने राष्ट्रीय भावना की सबसे अधिक अभिव्यक्ति अपने नाटको में की। अपने नाटको द्वारा भारतेन्दुजी ने जनता में देशभक्ति की भावना का संचार किया और राजनीतिक एवं सामाजिक जागृति का प्रसार किया।

उनके नाटको में हिन्दु—मुस्लिम संधर्ष की झलक मिलती है तथापि उनमें राष्ट्रीयता का सूत्रपात हुआ है। उनकी कविता में भारतवर्ष की दुर्दशा का अत्यंत मार्मिक चित्रण हुआ है। उन्हों ने अपने दोषो को निर्भयतापूर्वक स्वीकार किया है।

साथ ही वर्तमान सोचनीय परिस्थिति में उनकी भारतीय एकता की भी अभिलाषा है।

एक ही भाषा, एक ही मत और राजनैतिक एकत्व के द्वारा ही आज देश पुनः प्राचीन गौरव को प्राप्त कर सकता है।

हिन्दू जाति की गिरी हुई अवस्था से उन्हें बडा दुःख होता है। आज वीर क्षत्रिय जाति का ही लोप हो गया है तभी तो विदेशी अधिकार जमाए बैठे है।

इस प्रकार भारतेन्दुजी की राष्ट्रीयभावना के दो रुप है। एक तो वर्तमान समय की दुरावस्था का करुण चित्रण और दूसरा अतीत गौरवगान अथवा सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की भावना। वर्तमान दुर्दशा के कारणों में टैक्स सर्वप्रमुख है अत एव उसका सबसे अधिक विरोध है, अंग्रेजो की व्यापार नीति का भी विरोध है—

''अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन विदेश चल जात यहै अति ख्वारी।।
सबके ऊपर टिक्स की आफत आई।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।''४

भारतेन्दु युग के सभी कवि देश की अतीतकालीन भव्यता की ओर संकेत करते है। कहाँ वो प्राचीनकाल का शक्तिशाली भारत जिसकी ओर कोई दृष्टि उठाकर भी नहीं देख सकता था और कहाँ आज का पददलित देश, जिस पर सभी अत्याचार कर रहे है।

भारतेन्दु युग के कवियों को साम्प्रतिक देश की दुर्दशा देखकर बड़ा दुःख होता है। इस शोक को भारत की सांस्कृतिक महत्ता का स्मरण उत्कर्ष प्रदान करता है। इसके साथ ही देश की जनता को पाश्चात्य सभ्यता के प्रति आकर्षित देखकर ये कवि जनता का ध्यान अपनी प्राचीन संस्कृति और उसके उन्नायक नेताओं की ओर ले जाते है। यह सांस्कृतिक राष्ट्रीयतावाद भी इनकी कविता में मुखरित है। भारत के अतीतकाल के गौरव के प्रति यह भावना भारतेन्दु की 'भारत भिक्षा' कविता में व्यक्त हुई है।

सांस्कृतिक राष्ट्रीयवाद का एक रुप स्वदेशी आंदोलन है। भारतेन्दुजीने विदेशी मलमल और मारकीन का व्यवहार करनेवालों की कटु आलोचना की है।

उन्होंने जनता को विदेशी वस्तुओं एवं फैशन की वस्तुओं का बहिष्कार करके अपने पैरों पर खड़े होने की प्रेरणा दी है। विदेशी वस्तुओं के व्यवहार से हमारी गुलामी की जंजीरे जकड़ती है, हमें आर्थिक परतंत्रता घेर लेती है। इसलिए हमें विदेशी बुद्धि एवं वस्तुओं का बहिष्कार करना उचित है। आज के नवयुवकों पर फैशन का भूत सवार है। और वे अपने देश की परतंत्रता की श्रृंखला को मजबूत कर रहे है। किन्तु यह चाल अच्छी नहीं है। ''निज

भाइन के रचे वसन भूषन नहिं भावत''— यह तो गुलामी की जड़ मजबूत करना है। इसलिए बालमुकुन्द गुप्त ने देश के नवयुवकों में जागृति फैलाना चाहते है। वे नवयुवकों से एक साथ जीने और मरने की प्रतिज्ञा करा रहे है—

''आओ एक प्रतिज्ञा करें, एक साथ सब जीवें मरें।
अपनी चीजें आप बनाओ, उनसे अपना अंग सजाओ।''५

भारतेन्दुयुग की सांस्कृतिक राष्ट्रीय भावना का ही एक रुप देश की दयनीय अवस्था से प्रेरित होकर 'ईश कृपा की प्रार्थना है। ये बड़ी करुण पुकार करते है। भारतेन्दुजी ने 'नीलदेवी' नाटक में नीलदेवी की प्रार्थना में अपने युग की प्रार्थना सुनाई है।

भारतेन्दुयुगीन राष्ट्रीय भावना का एक रुप जन्मभूमि प्रेम है। कवियों ने जन्मभूमि के प्रति अपने प्रेम को प्रगट करते हुए इस गौरव भूमि का परिचय दिया है। राधाचरण गोस्वामी ने भारतभूमि के प्रति अपने प्रेम को अपने काव्यों में प्रगट किया है।

भारतेन्दुयुगीन कविता की राष्ट्रीय भावना का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्वर आजादी की प्राप्ति के लिए सर्वस्व त्याग का ओजस्वी स्वर है। भारतेन्दु हरिशचंद्र के शब्दो में गुलामी की जंजीरों से जकड़े इस देश के वीरों के लिए एक ही उपाय है। क्यों कि भारत की गौरव मंडित परंपरा रही है, यहाँ के वीर आजादी की रक्षा के लिए केसरिया बाना धारण करके शत्रुओं पर टूट पड़ते थे और जीते जी स्वतंत्रता की रक्षा करते थे।

भारतेन्दुजी ने अपने युग की चेतना को प्रबुद्ध किया। वे सत्कवि, देशप्रेमी, राष्ट्रीय भावनाओं से पूर्ण और सहृदय कोटि के समाज सुधारक भी थे। डॉ. रामविलास शर्मा ने भारतेन्दुजी की जनवादी प्रवृति की सोदाहरण व्याख्या इस प्रकार की है— भारतेन्दु युग का साहित्य जनवादी इस अर्थ में है कि भारतीय समाज के पुराने ढाँचे से सन्तुष्ट न होकर उसमें सुधार भी चाहता है। वह केवल राजनीतिक स्वाधीनता का साहित्य न होकर मनुष्य की एकता समानता और भईचारे का साहित्य है। भारतेन्दु स्वदेशी आंदोलन के ही अग्रदूत न थे, वे समाज सुधारकों में भी प्रमुख थे। स्त्रीशिक्षा, विधवा—विवाह, विदेशयात्रा आदि के वे समर्थक थे। इससे भी बढ़कर महत्त्व की बात यह कि भारतीय महाजनों के पुराने पेशे सूदखोरी की उन्होंने कड़ी आलोचना की थी। लिखा था —सर्वदा से अच्छे लोग ब्याज खाना और चूडी पहिनना एकसा समझते है पर अब के आलसियों को इसी का अवलम्ब है न हाथ हिलाना पड़े न पैर, बैठे—बैठे भुगतान कर लिया। भारतेन्दुजी ने भक्ति भावना से पूर्ण रचनाएँ बहुत की, किन्तु उनका साध्य सदैव देश, जाति और भाषा की प्रगति रहा। उन्होंने युग की

सामाजिक, राजनीतिक धार्मिक तथा आर्थिक परिस्थितियों का भली–भाँति अध्ययन करके अपनी अद्‌भुत प्रतिभा और दूरदर्शिता से भारत देश का एक केसा चित्र प्रस्तुत किया जिसमें उनका समाज और देशप्रेम वैयक्तिक कल्पना न रहकर राष्ट्रीय चेतना का प्रतीक बन गया है फिर भी वह भारतीय संस्कृति के अनुरुप है। भारत की दुर्दशा का बड़े परिताप से उन्होंने अपने काव्य में वर्णन किया है।

भारतेन्दुजी सच्चे अर्थो में युग–प्रवर्तक थे। अपनी बहुमुखी साहित्यिक सेवाओं के द्वारा उन्होंने हिन्दी भाषा और साहित्य को उन्नत किया। जिस समय भारतवर्ष में अंग्रेजी का प्रभाव खूब बढ़ता जा रहा था और भारतीय लोग अपनी भाषा का निरादर कर रहे थे, मातृभाषा में लिखना अपना अपमान समझते थे, उसी समय भारतेन्दु ने हिन्दी भाषा और साहित्य को अपनी बहुमुखी रचनाओं से समृद्ध किया और हिन्दी को अन्य भाषाओं की तुलना में गौरवान्वित बनाने का प्रयत्न किया। उन्होने देश और जाति की समृद्धि का मूल भाषा और साहित्य को माना है–

‘‘निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को भूल।’’६

भारतेन्दु ने हिन्दी साहित्य में नए नए विचारों का सन्निवेश किया और अपने युग की नाड़ी टटोलकर जन–भावना को अपने साहित्य द्वारा रुप दिया। अपनी पुरी प्राणशक्ति से उन्होंने भारतवासियों में सामाजिक और राजनीतिक चेतना प्रबुद्ध करने का प्रयत्न किया। इससे भी बढ़कर उन्होंने सामाजिक चेतना में क्रांति लाकर भारतवासियों को स्वदेश प्रेम और स्वाभिमान सिखाया, उन्हें गफलत से जगाया और स्वतंत्रता के बीज बोए। उन्होंने अदम्य के साथ हिन्दी काव्यधारा को एक नई दिशा में प्रेरित किया और कवि–जनों के सम्मुख सामाजिक क्षेत्र के नवीन–नवीन विषय प्रस्तुत किए। देश की पराधीनता ने उन्हें व्याकुल कर रखा था, समाज की दुर्बलताएँ उन्हें अखर रही थी और इससे भी अधिक अंग्रेजो द्वारा किया जाने वाला भारतीय जनता का आर्थिक शोषण तो उन्हें व्यग्र किए दे रहा था। आर्थिक शोषण में टैक्स का रुप सबसे भयंकर था, जिसने जनता की कमर तोड़ दी थी, यह एक भयंकर आफत थी, इस टैक्स ने तो होश उड़ा दिये और चारों ओर हाहाकार मच गया–

‘‘सबके उप्पर लगा टिक्कस कि उड़ा हास मोरा।
रोवै क चाहिए हंसी ठीठी ठठाना कैसी।।’’७

भारतेन्दु युग की कविता में जनवादी विचारधारा के मुख्य स्वरुप इस प्रकार है। जनवादी विचारधारा का एक स्वरुप तो समाज के दोषयुक्त अंग की कटु आलोचना है।

भारतेन्दु युग की कविता में साम्प्रतिक समाज की दशा का, विदेशी सभ्यता के संकट का, पुराने रोजगार, शराफी हुंडी के बहिष्कार का, युगानुरुप भारतेन्दुजी की जनवाणी में सुनाई देता है।

वेदमार्ग को छोडकर मुस्लिम संस्कृति से प्रभावित लोगों की कटु आलोचना राधाचरण गोस्वाामीजी की कविता में देखने को मिलती है।

भारतेन्दु युग में दो विचारधाराएँ स्पष्ट लक्षित होती है। एक तो पुराणवादी परंपरा के समर्थकों की और दुसरी आधुनिक व्यापक दृष्टि वालों की। भारतेन्दु ने प्राय: मध्यम मार्ग का अवलम्ब लिया है। तत्कालीन धार्मिक क्षेत्र की क्रांति को इस युग के कवियों ने वाणी दी। भारतेन्दु ने सामाजिक दोषें, रुढ़ियो कुरीतियों का धोर विरोध किया है। उन्होंने धर्म के नाम पर होनेवाले ढोंग की पोल खोल दी है।

प्रतापनारायण मिश्र स्त्रियों की शिक्षा के पक्षपाती है, बाल—विवाह के विरोधी है, विधवाओं के दु:ख से क्षुब्ध है।

आर्यसमाज की धार्मिक क्रांति भी इसी युग में हुई थी और उसका स्वर भारतेन्दु युग की कविता में पूर्णरुप से मुखरित हुआ है।

भारतीय अर्थ व्यवस्था को सुद्धढ़ करने की कामना से इस युग के कवियों ने स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहन देने और स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करने पर भी बल दिया। जीवत बिदेश की वस्तु लै ता बिन कछु नहि करि सकत के प्रतिपादक भारतेन्दु ने ‘प्रबोधिनी’ शीर्षक कविता में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार की प्रत्यक्ष रुप में प्रेरणा दी है। प्रेमधन की ‘आर्याभिनन्दन’ प्रतापनारायण मिश्र की ‘‘होली है’’ तथा अम्बिकादत्त व्यास की ‘भारत धर्म’’ शीर्षक कविताओं में विदेशी वस्त्रों और अन्य वस्तुओं के आयात को भारत की आर्थिक दुर्गति का मूल कारण माना गया हे। यद्यपि प्रेमधनने ‘स्वागत’ शीर्षक कविता में अम्बिकादत्त व्यास ने ‘जटिल वणिक’ में और राधाकृष्ण दास ने ‘जुबिली’ में बीजली, यातायात के सुगम साधनों, सिंचाई की सुविधाओं, शिक्षा प्रसार आदि अलभ्य लाभ प्रदान करने के लिए ब्रिटिश शासन की प्रशंसा की है, किन्तु इसके साथ ही वे यह भी नहीं भूल सके कि सामान्य जनता और किसानों की दरिद्रता धटने के स्थान पर बढ़ती गयी है। इसलिए पाश्चात्य सभ्यता के संपर्क में देश के सांस्कृतिक पुनरुत्थान की आवश्यकता का अनुभव करते हुए भी उन्होंने शासक वर्ग द्वारा देश के आर्थिक शोषण का विरोध किया है। प्रतापनारायण मिश्र ने एक गजल में देश की दुर्दशा पर गहरी चिंता प्रगट की है। अभी देखिए क्या दशा देश की हे।

बदलता है रंग आसमां कैसे— कैसे ? कहां तो प्राचीन भारत की भौतिक और सांस्कृतिक समृद्धि और कहां अकाल महंगाई, महामारी तथा करों के बोझ से त्रस्त जन—जीवन। परिवार समाज और देश की क्रमश: बढ़ती हुई हीनावस्था के चित्रण में कवियों की वाणी अनायास करुणा से भीग उठी। भारतेन्दु ने समाज की पीडा को क्रमश: इन शब्दो में व्यक्त किया है——

''रोवहु सब मिलि आवहु भारत भाई।

हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।''८

प्रतापनारायण मिश्र जी ने भी ऐसी ही वेदना व्यक्त की है।

संदर्भ सूचि:

१. भारत दुर्दशा—कवि भारतेन्दु पृष्ठ— ५२

२. वही — पृष्ठ ७३

३. वही— पृष्ठ ५२

४. निबंधावली —बालमुकुंद गुप्त प्रथम —भाग— पृष्ठ ७७

५. भारतेन्दु समग्र से— पृष्ठ २२८

६. भारत दुर्दशा—कवि भारतेन्दु पृष्ठ—५६

७. वही— पृष्ठ ५२